रामचरितमानस का भाषा तात्विक चिंतन

डॉ. आर.पी. वर्मा

एसो. प्रो. एवं अध्यक्ष हिन्दी विभाग,

राजकीय महाविद्यालय गोसाईखेड़ा,

जनपद–उन्नाव, उ.प्र.

बहुत दूर तक के परिवेश को मुस्कराने का अवसर मिलता है। तुलसीदारस ने भारतीय काव्य–परंपरा के अनुसर स्तुति संदर्भ में देवभाषा संस्कृत और सामान्य रूप से लोकभाषा का सुबोध रूप अपनाया है–

वर्णानामर्थसंघानां रसानां छंद सामपि।

म३्गलानां च कर्त्तारौ बन्दे वाणीविनायकौ।।

लोकमंगकल की कामना से आराध्य की अर्चना और अनुध्यान, सातों कांडों के आदि में श्लोकों के माध्यम से किया गया है। अयोध्याकांड में कवि ने सीता–राम की अर्चना सरल देवभाषा में की है–

नीलाम्बुजश्यामलकोमला३गं

सीतासमारोपितवामभागम्।

पाणौ महासायकचारूचापं नमापि रामं

रघुवंशनाथम्।।

इस प्रकार मानस के आदि अंत और प्रत्येक खंड के प्रारंभ में देवभाषा का प्रयोग कर इसे दिव्य रूप प्रदान किया गया है। देवभाषा की हरी–भरी धरती से उभरा आराध्य विद्वानों को अनुप्राणित करता है और श्रद्धालुओं की शान्त और भक्ति–रस–पान कराता है।

देवभाषा की योजना और इसकी प्रेरक संप्रेषणीयता के विषय में आचार्य चंद्रबली पांडेय ने लिखा है,–''उन्होंने उसी भाषा में रचना की जा सबकी मनभावनी नहीं परंपरागत भाषा थी और जिसके शब्द सभी को भाते, किंतु साथ ही उन्होंने संस्कृत को भी मंगलाचरण के रूप में अपनाया...... ....रामचरितमानस में 'सुभाव' ही नहीं 'सुभाषा' भी है। भाषा और भाव में वही संबंध है जो सीता और राम में।

तुलसीदास ने दिव्य भावों को संस्कृत और लोकभाषा में समन्वित रूप में प्रस्तुत कर अपनी विराट चेतना का परिचय दिया है। इस विषय में डॉ0 धीरेन्द्र बहादुर सिंह भाव व्यक्त करते हैं, ''अवधी भाषा को संस्कृत का जामा पहनाकर उसे संस्कृत मिश्रित रूप देने की प्रक्रिया गोस्वामी जी की भाषा को महान गरिमामयी, मधुर तथा भावाभिव्यंजन बना देती है।

तुलसीदास ने जन–मन–रंजन और लोक कल्याण हेतु अनुप्रेरक कथा को लोकभाषा में प्रस्तुत करने का सफल प्रसस किया है–

''कीरति भनिति भूति भलि सोई। सुरसरि सम सब कहँ हित होई।

भारतीय संस्कृति के उपसक सहत व्यक्तित्व के धनी तुलसी ने अपने आराध्य और सहज अभिव्यक्ति आधार की चर्चा की है–

स्याम सुरभि पय बिसद अति गुनद करहिं सब पान।

गिरा ग्राम्य सिय राम जस गावहिं सुनहिं सुजान।।

ग्राम्य गिरा के संदर्भ में विद्वानों ने पर्याप्त चर्चा की है। आचार्य चंद्रबली पांडेय के अनुसार,–''तुलसीदास ने ग्राम्य गिरा में रचना की है, किन्तु उसे ग्राम्य दोष से सर्वथा मुक्त रखा है।''

डॉ0 सुरेशचंद्र गुप्त ने 'ग्राम्य' शब्द के अर्थ संदर्भ में आचार्य वामन, आचार्य रूद्रट और आचार्य भोज के देश, कुल, जाति पात्र आदि के संदर्भ अनौचित्य अश्लील और अमंगल आदि को देखते हुए 'ग्राम्य' के लिए 'अग्राम्य' नये शब्द का प्रयोग किया है, ''किन्तु इस मुक्ति को अभिद्येयार्थ में ग्रहण न कर यदि यहाँ उनकी शालीनता की ही अभिव्यक्त मानी जाए, तो यह कहना होगा कि उन्होंने 'ग्राम्य गिरा' में नहीं अपितु अग्राम्यवाणी में रचना की है।

तुलसी के इस पंक्ति का गंभीरता से विचार करने पर स्पष्ट होता है कि यहाँ ग्राम्य गिरा के लिए आचार्य वामन, आचार्य, रूद्रट और आचार्य भोज आदि के शब्दार्थ–संदर्भ को अपनाने की आवश्यकता नहीं है। समय के दीर्ष अंतराल के पश्चात अर्थ–विकास/अर्थोत्कर्ष संभावित है, इस भाषा की गुणवत्ता पूर्व पंक्ति के भाव–साम्य पर स्पष्ट होती है, ''श्याम गौ काली होने पर भी उसका दूध उज्जवल और अन्यंत गुणकारी होता है। इसी प्रकार ग्राम्य भाषा में लोक शासित व्याकरण के आधार पर विकसित सीता–राम के गुणगान को बुद्धिमान लोग पूर्ण लगन से गाते और सुनते हैं।'' इस प्रकार ग्राम्य गिरा का अर्थ चंचल विशेष की सहज और प्रभावी भाषा ही लगाना उचित है।

मानस की अवधी भाष के स्वरूप पर विद्वानों में मतैक्य नहीं है। कैलाग ने इन्हें 'बैसवाड़ी' माना है। डॉ0 बाबू राम सक्सेना ने प्राचीन अवधी तो आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र और हनुमान प्रसाद पोद्दार ने ब्रज और अवधी के मिश्रित रूप को मान्यता दी है। प्रसिद्ध व्यवहारिक भाषाविद् तुलसीदास ने अनकूल और प्रभावी संप्रेष्णीयता गुण–सम्पन्न भाष के लिए ऐसी अवधि की संकल्पना की है हिसमें पूर्वी–पश्चिमी और केन्द्रीय अवधी के तीनों रूपो का आकर्षक समन्वित रूप है। प्रत्येक खंड के आदि और रचना की परिसमाप्ति पर संस्कृत भाषा का सरल रूप मान को भाषायी यास्वरता प्रदान करता है।

मानस की भाषा की मधुरता, कर्ण–प्रियता, सहजता और बोधगम्यता से ग्रंथ में भाव–सम्प्रेषणीयता का मन–भावन विकास हुआ है। मानस की भाषा का तात्विक विश्लेषण करते हैं, तो इस भाषा की गुणवत्ता और लोकप्रियता के सूत्र सहज रूप में समाने आते हैं।

'मानस' की भाषा की प्रमुख ध्वन्यात्मक विशेषता है कि इसमें हस्व स्वरों की प्रबलता से भाषा में मधुर ध्वन्यात्मक रूप सामने आते हैं–

'करऊ अनुग्रह सोइ बुद्धि राशि सुभ गुन सदन।'

'अस स्वामी एहि कहँ मिलिहि परी हस्त असि रेख।

'करिअ न संसय अस उर आनी।

'सुनिअ कथा सादर रति मानी।

तुलसी जसि भवतव्यता तैसी मिलइ सहाइ।

आपनु आवइ ताहि पहि तहाँ लै जाइ।।

इन पंक्तियों के शब्दों अ, ई और उ स्वरां का विकसित स्वरूप मानस की सहज हस्व स्वर प्रधानता से भाषायी माधुर्य सामने आया है। करो या करे से करउ ऐसा से अस, ऐसी, से असि, करो स करिअ आदि का ह्स्व स्वर प्रधान ध्वनि–निर्मित मानस में 'उ' बहुला रूप अवलोकनीय है–

'जागेउ अजहुँ न अवधपति कारनु कबनु विसेषित।'

'रामु रामु रटि भोरू किए कहइ न मरमु महीपु।'

शब्दों में विशेष मधुर रूप उभरा है। मानस में 'ऋ' के स्थान पर 'रि' का प्रयोग किया गया है–

माता पिता उरिन भए नीकें।

गुरू रिनु रहा सोचु बढ़ जीके।

रिषिन्ह गौरि देखी तहँ कैसी। मूरति संत तपस्या जैसी।।

मानस की भाषा में संयुक्त स्वर 'ऐ' और 'और' को यत–तत्र अथवा 'अय' और 'अउ' करने से माधुर्य भाव विकसित हुआ है। इससे भाषा को अपेक्षित लचीला रूप मिल गया है–

निंदहि आयु सराहि निषादहि।

को कहि सकइ बिमोट बिषादहि।।

देव दया बस बड दुख पायउ।

सहित समाज काननहिं आयउ।।

मानस की भाषा में सरलीकरण, सहजीकरण और छंदबद्धता के लिए कभी स्वरागम, कभी ह्स्वीकरण तो कभी दीर्घीकरण आदि प्रक्रियाएँ चलती रही हैं। जिस प्रकार संवादात्मक भाषा में इन प्रक्रियाओं की विशेष भूमिका होती है, उसी प्रकार मानस की भाषा में इनसे प्रभावोत्पादकता का विकास हुआ है–

'अस्तुति करि सुर सिद्ध सिधाए।

लछिमन कृपासिंधु पहिं आए।।''

'देबि तजिअ संसउ अस जानी।

भंजब धनुषु राम सुनु रानी।'

यहाँ 'स्तुति' से अस्तुति में आदि स्वर 'अ' आगभ, 'लक्ष्मण' से 'लछिमन' में मध्य स्वर 'इ' आगम और 'तजि' से 'तजिअ' में अंत स्वर आगम दर्शनीय है।

तुलसीदास ने मानस में श्रेष्ठ लयात्मकता और छंदबद्धता के लिए यत–तत्र ह्स्वीकरण और दीर्घीकरण प्रक्रिया का उपयोगी आधार लिया है।

हरषिंह निरखि राम पद अंका।

मानहुँ पारसु पायउ रंका।।

सहे सुरन्ह बहु काल विषादा।

नरहरि किए प्रगट प्रहलादा।

लगि लगि कान कहहिं धुनि माथा।

जब सुर काज भरत के हाथा।।

इन पंक्तियों में प्रयुक्त अंक, रंक, विषाद, प्रहलाद माथ और हाथ शब्दों के अंतिम ह्स्व अक्षर दीर्घीकरण आधार पर क्रमशः अंका, रंका, विषादा, प्रहलाद, माथा अैर हाथा बन गये हैं। इस ध्वनि–विकास प्रक्रिया में चौपाई छंद की अनुकूलता और प्रेरक गेयता का स्वरूप सामने आया है।

मानस में सहज लोकभाषा को प्रतिष्ठा मिलने में इसमें अनुनासिकता का प्रभाव गंभीरता से दिखाई देता है। अनुनासिकता का स्वरूप शब्द के आदि, मध्य और अंत तीनों स्थितियों में मिलता है। उनमें अंत अक्षर अनुनासिकता का सर्वाधिक प्रभावी रूप सामने आता है।

मास दिवस तहँ रहेउँ खरारी।

सिला देह तहँ चलेउँ पराई।।

मृषा न कहउँ मोर यह बाना।

बंदउँ (बाल. 5/1) सपनेहूँ (अयो. /139) पैहिउँ (सुन्दर/1/3) आदि।

मानस में शब्द के आदि अक्षर पर भी अनुनासिकता के प्रभावी प्रयोग मिलते हैं–

जनु अंगार रासिन्ह पर मृतक धम रह्यो छाइ।

जौं मागा पाइअ बिधि याहीं।

ए रखिअहिं सखि आँखिन्ह माहिं।।

इस प्रकार मानस–भाशा को अनुनासित से अतिरंजित करने वाले शब्दों की संख्या पर्याप्त है–छाँड़त (लंका का. 2340), पाँस (किषकि. 20/3), बँधाइअ (सुंदर,59/2), माँसू (बाल,172/4), सँग (अरण्य,8/3), साँझ (अयो. 120/1)

मानस में शब्द की मध्य–अक्षर–अनुनासिकता बहुत विरल है, किन्तु कुछ उदाहरण यत–तत्र मिल जाते हैं–

राजा रामु जानकी रानी।

आनँद अवधि अवध रजधानी।।

देखहिं कौतुक नभ सुर वृंदा।

कबहुँक बिसमय कबहुँ अनंदा।।

मानस में यत्र–तत्र कुछ शब्दों एकाधिक अक्षरों पर अनुनासिकता दिखाई देती है–

साँचेहुँ में लबार भुज बीहा।

जौं न उपारिउँ तब दस जीहा।।

व्यंजनों का मानस में प्रयोग विशेष रूपों में मिलता है। कुछ व्यंजनों के उल्लेखनीय विकास इस प्रकार हुए हैं–

मानस में मूर्द्धन्य नासिक्य 'ण' ध्वनि प्रायः नासिक्य में परिवर्तित होकर प्रयुक्त होती है–

मन क्रम बचन चरन रत होई।।

परनकुटी प्रिय प्रियतम संगा

मानस में अंतस्थ व्यंजन 'व' ध्वनि ओष्ठ्य अल्पप्राणख् व्यंजन 'ब' में परिवर्तित होकर प्रयुक्त हुई है–

जदपि कही कप अति हित बानी।

भगति विवेक बिरति नया सानी।

चौके चारू सुमित्राँ पूरी।

मतिमय बिबिध भांति अतिरूरी

मानस में तालव्य 'श' के स्थान पर दंत्य 'स' का प्रयोग किया गया है–

तौ सिव धनु मृनाल की नाई।

तोरहुँ राम गनेस गोसाई।।

स्वास जरई माहिं सरीश।।

संयुक्त व्यंजन 'ज्ञ' (ज्ँ) के स्थान पर 'ग्य' का प्रयोग मिलता है–

सोई सर्बग्य गुनी सोइ ग्याता।

सोइ महि मंडित पंडित दाता।।

बोला बिहसि महा अभिमानी।

मिला हमहि कपि गुरू बड़ ग्यानी।।

रामचरितमानस की स्वर और व्यंजन ध्वनियाँ से उसकी सरल, सरस, बोधगम्य और मधुर लोकभाषा का स्पष्ट ज्ञान होता है। शब्द–संरचना में अ, इ और उ स्वरों; इ ओर उ की मात्राओं के प्रयोग के साथ स्वर–गुच्छ के समुचित प्रयोग के मानस की भाषा का आकर्षक रूप सामने आया है।

तुलसीदास महान शब्द शिल्पी थे। रामभक्त कवि ने जिस प्रकार मानस–रचना में लोकभाषा अवधी के आदि अंत और मध्य संस्कृत भाषा को संजोया है उसी प्रकार उनकी भाषा में

तद्भव शब्दों के मध्य तत्सम शब्दों का प्रयोग मणिकांचनयोग सिद्ध हुआ है।

डॉ0 माता प्रसाद गुप्त ने तुलसी की शब्दावली के विषय में लिखा है,–''अवधी रूपों संस्कृत शब्दों के सम्मिश्रण से गोस्वामी जी ने एक अत्यंत सफल काव्य–भाषा का निर्माण किया है। ..... उनमें भावों के भाषा का अपूर्व सामंजस्य हुआ है, न कहीं शिथिलता है और न दुरूहता; सरलता प्रचुर है। सुबोध इतनी है कि साधारण योग्यता के पाठक और बड़े–बड़े विद्वान दोनों की रामकथा का आनन्द उठाते हैं।''

डॉ0 उदयभानु सिंह ने 'तुलसी की भाषा में संस्कृत शब्दावली की भूमिका है, ''उन्होंने लोकमंगल की सिद्धि के लिए लोकभाषाओं में रचना की, साथ ही विद्वज्जनों के परितोषार्थ संस्कृत की तत्सम शब्दावली तथा संस्कृताभासित भाषा का व्यवहार भी किया।'''

रामचरितमानस में देवभाषा संस्कृत को सम्मानजनक स्थान दिया गया है। 'मानस' की भाषा में तत्सम शब्दों की संख्या सामान्य लोकभाषा के तत्सम शब्दों की संख्या की अपेक्षा कहीं अधिक है। बोधगम्यता के विकास संदर्भ से तत्सम शब्दावली की विशेष भूमिका है। मानस के तत्सम शब्द समाज में बहुत प्रयुक्त रहे हैं। इसलिए इनका प्रयोग सम्प्रेषणीयता के लिए वरदान सिद्ध हुआ है–

'परम रम्य गिरिबरू कैलासू।

सदा जहाँ सिव उमा निवासू।।'

'निज कर नमन काढ़ि चह दीखा।

डारि सुधा विषु चाहत चीखा।।'

'कद मूल फल पत्र सुहाए।

भए बहुत जब ते प्रभु आए।।

'मानस' की प्रभावी तत्सम शब्दावली से लोकभाषा को आकर्षक साहित्यिक रूप मिला है। इससे बोधगम्यता में आशातीत विकास हुआ है।

'मानस' जन–मानस के अनुरंजन, सत्य–चिंतन और ईश–अनुध्यान करते हुए जीवन–लक्ष्य तक गतिशील रहने की प्रेरणा से समन्वित लोक–भाषा में लिखा गया श्रेष्ठतम महाकाव्य है। अभिव्यक्ति का आधार लोकभाषा होने के कारण तद्भव शब्दावली की प्रमुखता स्वयं सिद्ध है। तद्भव के सहत और व्यावहारिक प्रयोग के ही आधार पर रामचरितमानस राजा से रंक के घर तक पहुँच गया है। सुबोध साहित्यिक अवधी में रचित, मर्यादापुरूषोत्तम राम के पावन चरित की भाव–गंगा में तरंगायित 'मानस' भारतवासियों के लिए ही नहीं, प्रवासी भारतीयों के लिए भी दिव्य धर्म–ग्रंथ बन गया है। 'मानस' की तद्भव शब्दावली परिलसित पंक्तियाँ जन–सामान्य की लयात्मक स्वर–लहरी से आदर्श भावों की अभिव्यक्ति होती है–

'मंगल भवन अमंगल हारी।

द्रवउ सो दसरथ अजिर बिहारी।'

'कामिहि नारि पिआरि जिमि, लोभिहि प्रिय जिमि दाम।

तिमि रघुनाथ निरंतर प्रिय, लागहु, मोहि राम।'

'मानस' की भाषा में विभिन्न भारतीय भाषाओं के शब्दों के यत्र–तत्र सहज प्रयोग से आकर्षक भाषायी समन्वय हुआ है। राजस्थानी हिंदी के शब्द–प्रयोग का मनभावन रूप सामने आया है; यथा–

'मिला जाइ जब अनुज तुम्हारा।

जातहिं राम तिलक तेहि सारा।।'

गुजराती शब्दावली की भूमिका की भावाभिव्यक्ति के लिए विशेष उपयोगी सिद्ध हुई है। इन शब्दों

का सहज प्रयोग मणिकांचन योग सिद्ध हुआ है। शिव धनुष–भंग होने से कारण परशुराम के क्रोधित होने पर लक्ष्मण के संवाद में ऐसा पुट उभरा है–

'का छति लाभु जून धनु तोरे।

देखा राम नयन के भारे।।'

अवधी और भोजपुरी बोलियों की प्रवृत्ति में पर्याप्त समानता मिलती है। इसलिए भोजपुरी शब्दों का भी यत्र–तत्र किन्तु प्रभावी प्रयोग मिलते हैं–

'विविध ताप त्रासक विमुंहानी।

राम सरूप सिंधु समुहानी।।'

'करत विचार भयउ भिनुसारा।

लागे कपि पुनि चहूँ दुआरा।।'

तुलसीदास की उदार भाषायी दृष्टि से 'मानस' में विदेशी भाषा की शब्दावली को अनुकूल स्थान प्राप्त है। (गनी=धनी) और गरीब (गरीब) विरोधाभाषी युग्म अरबी शब्द प्रयोग दृष्टव्य है–

'गनी गरीब ग्राम नर नागर।

पंडित मूढ़ मलीन उजागर।।'

भारतीय संस्कृति के उपासक ने अपने आराध्य को अरबी शब्द–संबोधन से याद किया है–

'गुरू प्रसन्न साहिब अनुकूला।

मिटी मलिन मन कलपित सूला।।'

'मानस' में तत्कालीन मुस्लिम शासक की राजभाषा फारसी के प्रचलित शब्दों का स्वाभाविक प्रयोग हुआ है–

'धरम उधर नीति निधना।

तेज प्रताप सील बलवाना।।''

'नाचहिं गावहिं बिबुध बधूटीं।

बार–बार कुसुमांजलि छूटीं।।''

'कामिहि नारि पिआरि जिमि लोभहि प्रिय जिमि दाम।'

'मानस की व्याकरणिक योग्यता प्राप्त इकाई पद का लोक–शासित और सहज रूप विशेष प्रभावी है। पुल्लिंग से स्त्रीलिंग पद निर्धारण हेतु प्रायः आ, इ, ई, आनि, आनी, इनि आदि प्रत्ययों का सहयोग लिया गया है; यथा–

इ–कुअँरू कुअँरि भावँरि देहीं।

नयन लाभु सब सादर लेहीं।।'

ई–'गज रथ तुरग दास अरू दासी।

धेनु अलंकृत कामदुहा सी।।'

एकवचन से बहुवचन बनाने के लिए पदांत में न, नि, न्ह, ऐ की योजना की गयी है। आदरार्थक संदर्भ में एकवचन के स्थान पर बहुवचन का प्रयोग किया गया है, जो भाषायी श्रेष्ठता और श्रद्धा भाव का परिचालक है–

न्ह–'जिन्ह के अगुन न सगुन बिबेका।

जल्पहिं कल्पित वचन अनेका।।'

ए–'प्रभु देखि सब नृप हियँ हारे।

जनु राकेस उदय भएँ तारे।।''

'मानस' में सर्वनाम शब्दों की विविधता भाषा को अनूठी भास्वता और भावाभिव्यक्ति को अनुप्रेरक गंभीरता प्रदान करती है। मानस में प्रयुक्त कुछ सर्वनाम पद उद्धरणीय है–

उत्तम–पुरुष–मैं, हौं, महूं, हम

मध्यम–पुरुष–तू, तुम्ह, आप, रावरे

अन्य पुरुष– ते, तिन, तिन्ह, तहँ, तेइ, तेउ, उन, उन्ह, सो, साइ सोई, यह यहु, एति, इन्ह, एहा, ये।

संदर्भ

- ✓ डॉ0 रामदेव प्रसाद, रामचरितमानस की काव्य–भाषा।
- ✓ आचार्य चंद्रबली पांडेय, तुलसीदास।
- ✓ डॉ0 धीरेन्द्र बहादुर सिंह, तुलसीदास की कलागत चेतना।
- ✓ आचार्य चंद्रबली पांडेय, तुलसी।
- ✓ डॉ0 सुरेश चंद्र गुप्त, तुलसी का काव्यादर्श।
- ✓ डॉ0 मता प्रसाद गुप्त, तुलसी।
- ✓ डॉ0 उदयभानु सिंह, तुलसी काव्य मीमांसा।
- ✓ हिन्दी भक्तिकालीन काव्य–डॉ0 आर0पी0 वर्मा।
- ✓ हिन्दी साहित्य का इतिहास–आचार्य रामचन्द्र शुक्ल।
- ✓ हिन्दी साहित्य का वस्तुपरख इतिहास–डॉ0 राम प्रसाद मिश्र।